दया सिंह

बनाम

हरियाणा राज्य

फरवरी 20, 2001

[एम. बी. शाह और के. जी. बालाकृष्णन, जे. जे.]

भारतीय दंड संहिता, 1860-धारा 302 और 307 -आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ अधिनियम। 1987-धारा 3 और 5 -सुनवाई के दौरान दो चश्मदीद गवाहों द्वारा अपीलार्थी को विचारण के दौरान पहचानने व अन्य चश्मदीद गवाहों की अपीलार्थी की पहचान करने में विफलता के तहत की गई दोषसिद्धी - चश्मदीद गवाह की साक्ष्य द्वारा स्वतंत्र गवाहों की साक्ष्य की संपार्श्विक पुष्टि - अन्वेषण अधिकारी की ओर से परीक्षण पहचान परेड आयोजित करने में कोई चूक नहीं - अभिनिर्धारित दोषसिद्धी यथावत कायम रखी।

आपराधिक विचारण में शिनाख्त परेड पहचान -इसका उद्देश्य है, पूर्व पहचान के रूप में चश्मदीद गवाहों द्वारा पूर्व में की गई पहचान का उनकी साक्ष्य से पुष्टि करना - यदि न्यायालय में किसी गवाह की सारवान साक्ष्य विश्वसनीय पायी जाती है तो ऐसे में शिनाख्त परेड से पुष्टि के अभाव का भौतिक रूप से कोई फर्क नही है।

अपीलार्थी सहित 14 अभियुक्तों पर नामित न्यायालय द्वारा आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधि अधिनियम की धारा 3 और 5 के तहत और आई. पी. सी. की धारा 302/34 और 307/34 के तहत मुकदमा चलाया गया था। अभियोजन पक्ष के अनुसार, आरोपी ने चार लोगों की मृत्यु कारित की तथा गवाह पी.डब्ल्यू. 37, 38, 39, 40 और 47 को चोटग्रस्त कर दिया। पी.डब्ल्यू. 29 द्वारा प्राथमिकी दर्ज की गई थी। डी.आई.जी. (पी. डब्ल्यू. 45) ने अपीलार्थी के इकबालिया बयान दर्ज किये और तहसीलदार पी. डब्ल्यू. 43 व गवाह पी. डब्ल्यू. 38, पी.डब्ल्यू 37 के साथ परीक्षण पहचान के लिए कारागृह गए, जहाँ उन्हें सूचित किया गया कि अपीलार्थी ने परीक्षण पहचान परेड में भाग लेने से इन्कार कर दिया है।

विचारण के दौरान, 'जे' (पी.डब्ल्यू. 37) और 'एच' (पी.डब्ल्यू. 38) ने घटना के लगभग आठ वर्ष के बाद 14 व्यक्तियों में से न्यायालय ने अपीलार्थी की पहचान की, जबकि अन्य गवाहान अर्थात् पी.डब्ल्यू. 29, 40, 47, 43 और 45 अपीलार्थी की पहचान करने में विफल रहे, नामित न्यायालय ने अपीलार्थी को दोषी ठहराया और शेष अभियुक्तों को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया।

इस न्यायालय के समक्ष की गई अपील में, अपीलार्थी ने तर्क दिया कि - गवाह पी.डब्ल्यू. 37 व पी.डब्ल्यू. 38 ने अत्यंत विलम्ब से उसकी पहचान की इस आधार पर उक्त गवाहान की साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धी

को आधारित नही किया जा सकता और क्योंकि गवाह पी.डब्ल्यू. 29 और अन्य घायल साक्षियो यानी पी.डब्ल्यू. 40 और 47 और स्वतंत्र गवाह यानी पी.डब्ल्यू. 37 और पी.डब्ल्यू. 38 के साक्ष्य के आधार पर नहीं हो सकती है। तहसीलदार (पी.डब्ल्यू. 43) और डी. आई. जी. (पी.डब्ल्यू. 45) अपीलार्थी की पहचान करने में विफल रहे है तथा तहसीलदार के साक्ष्य को विश्वसनीय का दर्जा नही दिया जा सकता क्योंकि अन्वेषण अधिकारी ने तहसीलदार द्वारा आरोपी के दर्ज किए गए बयानों और उसके द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट को रिकॉर्ड में पेश नहीं किया। राज्य ने भी नामित न्यायालय के निर्णय के खिलाफ अपील दायर की।

न्यायालय ने अपील को खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया

अभिनिर्धारित किया - 1.1 'एच' और उसकी पत्नी 'जे' जिन्होने 14 व्यक्ति जो कि विचारण का सामना कर रहे थे उनमें से अभियुक्त की पहचान की, की साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। अपीलार्थी की पहचान के संबंध में उनकी साक्ष्य ठोस और सुसंगत है। न्यायालय परिसर में 'एच' का आचरण स्वाभाविक था। इस गवाह द्वारा की गई पहचान का प्रतिपरीक्षण भी किया गया था और वह प्रतिपरीक्षा की परीक्षा में खड़ा हुआ था। 'जे' ने अपीलार्थी की पहचान हमलावर के रूप में भी की। उसकी साक्ष्य इतनी स्वाभाविक थी कि यह विश्वास करना असंभव

है कि वह आरोपी-अपीलार्थी को मिथ्या रूप से लिप्त कर रही हो। [11128-जी-एच; 1129-बी.आई.]

1. 2. यह नहीं माना जा सकता है कि घटना के समय, पी.डब्ल्यू. 37 और 38 ने अपनी धारणा की शक्ति खो दी थी। जहां साक्ष्य ठोस, सुसंगत और बिना किसी लक्ष्य के है और बिना किसी उद्देश्य के है, वहां गवाहों की मानसिक स्थिति और हमलावरों की पहचान को याद रखने की उनकी शक्ति के संबंध में सैद्धांतिक संभावनाओं की कल्पना करने और उन्हें बढ़ाना उपयुक्त नही है। धारणा और याद रखने की शक्ति मनुष्य से मनुष्य में भिन्न होती है और यह स्थिति पर भी निर्भर करती है। यह पुनरावर्ति करने की क्षमता पर भी निर्भर करता है। लेकिन यह उन गवाहों की विश्वसनीयता की शक्ति पर निर्भर करेगा जिन्होंने पहले न्यायालय में आरोपी की पहचान की है। वर्तमान मामले में, न्यायालय में 14 व्यक्तियों में से पहचान की गई, यह तथ्य स्वयं ही गवाह द्वारा पहचान करने के तथ्य को विश्वास प्रदान करता है। [11129-ई-एच]

1. 3. चूँकि घटना के दौरान गवाहों ने अभियुक्त की पहचान के बारे में स्थायी प्रभाव प्राप्त किया, किसी न किसी कारण से नामित न्यायाधीश द्वारा मुकदमे में हुई देरी और उसके पश्चात सात या आठ साल बाद न्यायालय में अभियुक्त की पहचानने से दोनो गवाहान की साक्ष्य इससे प्रभावित नहीं होती। [1130-A]

1. 4. वर्तमान मामले में, परीक्षण पहचान परेड आयोजित करने में अनुसंधान अधिकारी की ओर से कोई चूक नहीं है। तहसीलदार के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है जो अभियुक्तों की परीक्षण पहचान परेड आयोजित करने के लिए वहां गए थे। यह तर्क कि अनुसंधान अधिकारी ने तहसीलदार द्वारा दर्ज किए गए आरोपी के बयान और उसके द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट को रिकॉर्ड में पेश नहीं किया है और इसलिए, तहसीलदार के साक्ष्य को कोई विश्वसनीयता नहीं दी जानी चाहिए, गलत धारणा है। यह सच है कि यदि अनुसंधान अधिकारी ने आरोपी का बयान और तहसीलदार द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट को रिकॉर्ड पर पेश किया होता, तो यह उनके कथन की पुष्टि करता। लेकिन ऐसे निःस्वार्थ, स्वतंत्र, आधिकारिक गवाहों के साक्ष्य के लिए किसी पुष्टि की आवश्यकता नहीं है। तहसीलदार के सबूत कि वह पहचान परेड के लिए केंद्रीय कारागृह गया था, गवाह पी. डब्ल्यू. 38 के बयानों से भी पुष्टि होती है, जो भी आरोपी की पहचान करने के लिए केंद्रीय कारागृह गया था, लेकिन उन्हे यह सूचित किया गया कि आरोपी ने परीक्षण परेड में भाग लेने से इन्कार कर दिया हैं। तहसीलदार और डी. आई. जी. अपने आधिकारिक कार्यों का निर्वहन कर रहे थे और घटना से बिल्कुल भी प्रभावित नहीं थे जिससे अभियुक्त की पहचान याद रखी जा सके। [11127-F-H; 1128-A-C]

सूरजपाल बनाम हरियाणा राज्य, [1995 (SCC 64), पर निर्भर किया।

1.5. यह तर्क कि पी.डब्ल्यू. 29, 40 और 47 ने अभियुक्त को नही पहचाना, पी.डब्ल्यू. 37 और 38 के साक्ष्य संदिग्ध हो जाती हैं, सबसे पहले इस आधार पर ही स्थिर रहने योग्य नही है कि यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि प्रत्येक गवाह अभियुक्त की पहचान करने की स्थिति में होना चाहिए। दूसरा, क्योंकि वर्तमान मामले में, उपरोक्त गवाहों को ब वह 'एच' के परिसर के बाहर थे तब चोटें आईं। [1130-सी]

2. परीक्षण पहचान परेड का उद्देश्य पूर्व पहचान के रूप में चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य की पुष्टि करना है व गवाहान का ठोस साक्ष्य न्यायालय में साक्ष्य है। यदि वह साक्ष्य विश्वसनीय पाया जाता है तो परीक्षण पहचान द्वारा पुष्टि की अनुपस्थिति किसी भी तरह से सामग्री नहीं होगी। इसके अलावा, जहां गवाहों के दिमाग और स्मृति पर पहचान का स्थायी प्रभाव प्राप्त करने के कारणों को रिकॉर्ड पर लाया जाता है, वहां सैद्धांतिक संभावनाओं को विस्तृत करने और निष्कर्ष पर पहुंचना उपयुर्क्त नहीं है - आजकल आतंकवाद से प्रभावित वर्तमान सामाजिक वातावरण में वास्तव में महत्वहीन है। ऐसे मामलों में, पहचान परेड का आयोजन न करना अभियोजन पक्ष के लिए घातक नहीं है। [11127-बी-सी.]

हरि नाथ और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए. आई. और. (1988) ऐसेसी 345; मोहम्मद अब्दुल हफीज बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, ए. आई. और. (1983) ऐसे. सी. 367; वकील सिंह और अन्य बनाम बिहार राज्य, ए. आई. और. (1981) ऐसे. सी. 1392; सोनी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1982) 3 ऐसे. सी. सी. 368 और महाराष्ट्र राज्य बनाम सुरेश, [2000] 1 ऐसे. सी. सी. 471, संदर्भित।

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः आपराधिक अपील सं. 416/1998

ऐसे.सी. No.44/1989 में अंबाला के नामित न्यायालय के दिनांक 19.02.1998 व 23.02.1998 के निर्णय और आदेश के संदर्भ में संलग्न

आपराधिक अपील संख्या 773/1998 यू.और.ललित ऐसे.

उपस्थित पक्षों के लिए यू.और. ललित, ऐसे.और. शर्मा, ऐसे. श्रीनिवासन, महाबीर सिंह, (एन.पी.), जी.के. बंसल, नीरज के. जैन और डी. महेश बाबू।

न्यायालय का निर्णय प्रदत्त किया गया

शाह, जे. 1989 के केस नम्बर 44 के सत्र मामले में, 14 अभियुक्तों पर अंबाला में अतिरिक्त न्यायाधीश, नामित न्यायालय द्वारा आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1987 (इसके बाद "टाडा अधिनियम" के रूप में संदर्भित) की धारा 3 और 5 सहित विभिन्न

अपराधों के लिए मुकदमा चलाया गया था। अतिरिक्त न्यायाधीश ने 19 फरवरी, 1998 के अपने फैसले और आदेश के जरिये अपीलार्थी दया सिंह को गुरदीप सिंह की हत्या और पी.डब्ल्यू. 5 डॉ. हरनाम सिंह और श्रीमती जसवन्त कौर की हत्या का प्रयास करने का दोषी ठहराया। अपीलार्थी को खुशदेव सिंह, गुरप्रीत कौर और उसके सह-अभियुक्त गुरजन सिंह की हत्या करने के लिए अपराध में धारा 302 सहपठित धारा 34 भा.दं.सं. के तहत भी दोषी ठहराया गया और उसे आजीवन कारावास की सजा एवं 10,000/- रूपये जुर्माना, अदम अदायगी जुर्माना, एक वर्ष का अतिरिक्त कारावास भुगतने की सजा से दण्डित किया गया। उसे रामसिंह, सोमनाथ और हीरा सिंह को गोली मारकर हत्या करने के प्रयास में धारा 307 सपठित धारा 34 भा.दं.सं. के अपराध में दोषी ठहराया गया है और उन्हें दस साल के कठोर कारावास भुगतने और 5,000/- रूपये जुर्माना अदा करने, अदम अदायगी जुर्माना अतिरिक्त छह महीने के कठोर कारावास भुगतने की सजा से दण्डित किया। इसके अतिरिक्त कारतूस के साथ एक ए.के.47 राइफल कब्जे में रखने के अपराध में टाडा अधिनियम की धारा 5 के तहत दोषसिद्ध किया जाकार सात साल के कठोर कारावास और 3,000/-रूपये जुर्माना भुगतान करने व अदम अदायगी जुर्माना तीन माह के कठोर कारावास से दण्डित किया गया। सभी सजाओं को एक साथ चलाने का आदेश दिया गया था। नामित न्यायालय ने बाकी अभियुक्तों को बरी कर दिया।

विद्वान न्यायाधीश द्वारा पारित दोषसिद्धि के आदेश के विरुद्ध, अभियुक्त दया सिंह ने 1998 की आपराधिक अपील No.416 को प्राथमिकता दी है। इस अपील में, अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री यू.और. ललित ने मुख्य रूप से पी.डब्ल्यू. 37 जसवंत कौर और पी.डब्ल्यू. 38 डॉ. हरनाम सिंह जो अपीलार्थी की पहचान पर आधारित थी उसकी साक्ष्य की विश्वसनीयता के संबंध में अपनी दलीलों को सीमित कर दिया है।

राज्य ने दोषमुक्ति के आदेश के विरूद्ध आपराधिक अपील No.773/1998 दायर की है सजा में वृद्धि करने के लिए भी। राज्य द्वारा दायर अपील के संबंध में, अभिलेख पर साक्ष्य का विश्लेषण करने के बाद, यह स्पष्ट है कि अतिरिक्त न्यायाधीश द्वारा पारित उक्त आदेश में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। स्वीकारोक्ति बयान स्वैच्छिक नहीं पाए जाते हैं और उन्हें अविश्वसनीय माना जाता है। बरी किए गए आरोपी को अपराध से जोड़ने के लिए कोई अन्य सबूत नहीं है।

यह घटना डॉ. हरनाम सिंह के कुरुक्षेत्र में में स्थित उनके घर पर आतंकवादियों द्वारा किए गए हमले से संबंधित है, जिसके परिणामस्वरूप उनके बेटे ए. खुशदेव सिंह, बहू गुरप्रीत कौर, उनके बहनोई के बेटे गुरदीप सिंह और एक हमलावर गुरजंत सिंह की मौत हो गई और अन्य लोग घायल हो गए। इस अपील की सुनवाई के समय, घटना स्थल पर चार

व्यक्तियों की हत्या और गवाहों के घायल होने की घटना से संबंधित अभियोजन पक्ष का पक्ष विवादित नहीं है। प्रस्तुतियों पर विचार करने और पक्षों के लिए विद्वान बी वकील द्वारा उठाए गए तर्कों से संबंधित साक्ष्य की सराहना करने के लिए, हम डॉ. हरनाम सिंह, पी.डब्ल्यू. 38 और पी.डब्ल्यू. 37 उनकी पत्नी श्रीमती जसवंत कौर के साक्ष्य का उल्लेख करेंगे।। डॉ. हमाम सिंह का कहना है कि वे कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ता हैं और वर्ष 1987 में शाहाबाद से विधायक निर्वाचित हुये थे। 9 अप्रैल, 1988 को लगभग 8.15 से 8:30 बजे जब वे अपने घर में मौजूद थे, तो एक व्यक्ति उनके आंगन में आया और उन्हे आवाज लगाई। उस समय आंगन में दो बिजली के बल्ब जल रहे थे। जब वह अपने कमरे से बाहर आए, तो उन्होंने देखा कि एक 26-27 साल का हष्ठ-पुष्ठ सिख सज्जन जिसकी छोटी दाढ़ी थी और उनके हाथ में एक रिवॉल्वर थी। वह उसकी ओर भागा और उसे पकड़ लिया। शोर सुनकर उसकी पत्नी कमरे से बाहर आ गई। उसने उस सिक्ख को भी उसके बालों से पकड़ लिया। उस समय, एक अन्य व्यक्ति बाहर से स्टेनगन जैसी बांह पकड़े आया था जिसकी लंबी दाढ़ी थी और उनकी आँखें बिल्ली जैसी थीं। उस आदमी ने गोली चलानी शुरू कर दी और एक गोली उसके बांई बांह में लग गई। एक गोली उनकी पत्नी के पेट में भी लगी। उस समय उनके बेटे खुशदेव सिंह, बहू गुरप्रीत कौर और साले के बेटे गुरदीप जो टी. वी. देख रहे थे तब बाहर आये। आदमी जिसकी आंखे बिल्ली की तरह थी उसने, उनकी ओर गोलियां चलाईं और

चोट लगने के कारण, गुरदीप सिंह मुख्य द्वार पर गिर गया। उनके बेटे खुशदेव सिंह ने उक्त व्यक्ति को पकड़ लिया और उसे स्टेनगन छीनने की कोशिश की। उनका आगे कहना है कि जब खुशदेव सिंह ने उस व्यक्ति को पकड़ रहा था, तो उन्होंने अपनी बन्दूक से खुशदेव सिंह और गुरप्रीत कौर की ओर गोलियां चलाईं। जब खुशदेव उससे भिड़ रहा था, तो वह भागकर टेलीफोन करने के लिए अपने कमरे में गया और पुलिस स्टेशन को सूचित किया कि उन पर हमला किया गया है और गोलियां चलाई जा रही हैं। उसने आगे यह कथन किया है कि जब वह कमरे से बाहर गया तो मुख्य दरवाजे पर खड़े तीसरे बदमाश ने उस कमरे की ओर गोलियां चलाईं। उक्त भिडंत के दौरान एक कंबल, एक जूता, एक पगड़ी, एक जट्टी आंगन में गिर गई। उक्त स्टेनगन की मैगजीन भी गिर गई। जब वह टेलीफोन कॉल के बाद कमरे से बाहर आया, तो बदमाश भाग गए और देखा कि गुरदीप सिंह प्रवेश द्वार पर मृत पड़ा हुआ था। खुशदेव सिंह और गुरप्रीत कौर, जिन्हें दया सिंह के द्वारा बाहर घसीटा था और जिनके साथ वे कुश्ती कर रहे थे, घायल अवस्था में मुख्य द्वार के दाईं ओर सड़क पर लेटे हुए थे। जिस आतंकवादी को उसकी पत्नी ने पकड़कर खींचा था, वह भी मृत पड़ा था। खुशदेव और गुरप्रीत को सिविल अस्पताल ले जाया गया। उन्होंने उनको औई चोटों के कारण अस्पताल में कुछ ही मिनटों में दम तोड़ दिया। इसके बाद, उन्हें उनकी पत्नी और हीरा सिंह के साथ पीजीआई अस्पताल रेफर कर दिया गया। उसने अपराध स्थल से उक्त कुछ वस्तुओं की

बरामदगी के संबंध में एवं पुलिस द्वारा की गई अनुसंधान के संबंध में भी गवाही दी है। उनका आगे कहना है कि 7 मई 1988 को उन्हें और उनकी पत्नी को पुलिस सिविल अस्पताल, राजपुरा ले गई क्योंकि उन्हे यह कहा गया था कि जो दो आतंकवादियों को गोली मारने से मृत हो गये है, उनके द्वारा उनकी पहचान की जानी थी। उक्त दो शवों में से, उन्होंने एक शव की पहचान उस व्यक्ति के रूप में की जिसने मुख्य द्वार पर खड़े होने के दौरान उसकी ओर गोलियां चलाई थीं। अभियुक्त की पहचान के संबंध में उन्होंने कहा कि वह गोली चलाने वाले व्यक्ति की पहचान कर सकते हैं और अपीलार्थी दया सिंह की पहचान की। विद्वान न्यायाधीश ने नोट किया है कि उस समय न्यायालय कक्ष में बिजली नहीं होने के कारण आरोपी, गवाह, अधिवक्ता और वह स्वयं न्यायालय कक्ष के बाहर थे, जहाँ आरोपी की, डॉ. हरनाम सिंह ने दूसरे दौर में, जिसमें 3 से 4 मिनट लगे तब पहचान की। जिरह में उन्होंने कहा कि वे पिछले 40 वर्षों से चश्मे का उपयोग कर रहे थे और चश्मे की मदद से 30 से 40 या 100 गज की दूरी तक देख सकते है और 20 से 25 गज की दूरी से किसी व्यक्ति की पहचान कर सकते थे। उन्होंने यह भी कहा है कि पहचान के समय न्यायालय कक्ष में बिजली नहीं थी और अंधेरा था, इसलिए उन्हें न्यायालय कक्ष के बाहर जाना पड़ा और वहां उन्होंने आरोपी की पहचान की थी। उन्होंने स्पष्ट किया है कि वह बिल्ली की आँखों से क्या समझते थे और कहा कि ऐसी आँखें जो बिल्ली की तरह हो और इससे ज्यादा कुछ नहीं। गवाह से पूछा गया

कि क्या वह यह बता सकता है कि इंदरजीत सिंह नामक अन्य आरोपी की आंख बिल्ली की तरह है। इस पर उसका जवाब था कि- उसकी उनकी आंखें सामान्य है और बिल्ली की तरह नहीं दिखती। उसने यह भी कथन किया कि उसने घटना की तारीख को आरोपी दया सिंह को तीन-चार गज की दूरी से देखा है और दया सिंह ने आंगन में तीन गज की दूरी से गोलीबारी की थी। आगे की प्रतिपरीक्षा में, उसने कहा है कि वह दिनांक 06.02.1997 से पूर्व आरोपी दया सिंह का नाम जान गया था क्यूंकी आरोपी से पूछताछ के समय पुलिस ने उसे इस आधार पर सूचित किया था कि उसकी आंखें बिल्ली जैसी थीं और घटना के दो से चार महीने के भीतर उसे उसका नाम पता चल गया था। उसने यह भी कथन किया कि वह अपनी पत्नी के साथ आरोपी की पहचान के लिए केंद्रीय कारागृह, अंबाला गया था, लेकिन उन्हें सूचित किया गया कि आरोपी दया सिंह ने पहचान परेड में भाग लेने से इन्कार कर दिया है। उनका यह भी कहना था कि उन्होंने चश्मा पहनकर और चश्मा हटाने के बाद भी आरोपी दया सिंह की पहचान की थी और उसने अपने चश्मे को हटा दिया था ताकि वे खुद को संतुष्ट कर सकें कि वह व्यक्ति ही आरोपी दया सिंह है। उन्होंने इस सुझाव से इन्कार किया था कि उसने पुलिस के कहने पर आरोपी की गलत पहचान की थी। अपील में उठाए गए सीमित विवाद को देखते हुए, इस अपील में साक्ष्य के अन्य भाग को संदर्भित करने की आवश्यकता नहीं है।

इसी प्रकार पी.डब्ल्यू. 37 जसवन्त कौर की साक्ष्य है। उसके द्वारा यह कहा गया है दिनांक 09.04.1988 को रात करीब 8.15 से 8:30 बजे उनके पति डॉ. हरनाम सिंह अपने कमरे में काम कर रहा था तथा उसका बेटा खुशदेव सिंह, बहू गुरप्रीत कौर और गुरदीप सिंह टी. वी. में कार्यक्रम देख रहे थे। उस समय बाहर से एक व्यक्ति आया और डॉक्टर साहब को आवाज दी। उस समय आंगन में बिजली के दो बल्ब जल रहे थे। अपने पति की आवाज सुनकर, यह बाहर गई तो उसने देखा कि 25-26 वर्ष का एक हृष्ट पुष्ट व्यक्ति जिसकी छोटी दाढ़ी थी और हाथ में पिस्तौल थी, उसने उसके पति को पकड़ रखा था। इसने भी उक्त व्यक्ति के बाल खीेचे। इसके बाद, एक अन्य सिख जो भी हृष्ट-पुष्ट था, उसकी घनी दाढ़ी और हाथ मे आग्नेयास्त्र पकड़ा हुआ था जिसकी बिल्ली की तरह आंखें थी, उसने गोली चलाई और गोली उसके पति के बाएं भुजा पर और उसके पेट में लगी। गोलियां चलनें की आवाज सुनकर, गुरदीप सिंह, उसका बेटा खुशदेव सिंह और बहू गुरप्रीत कौर बाहर आ गये। उनका यह भी कथन था कि उक्त सिख ने गुरदीप सिंह की तरफ गोली चला दी जो उनके शरीर पर लगी और उनकी मौके पर ही मौत हो गई। इसके बाद, खुशदेव सिंह और गुरप्रीत कौर उस सिख से भिड़ गए जिसने गोली चलाई थी। इस भिंडत में वह सिख, गुरप्रीत कौर और खुशदेव सिंह सड़क पर आ गए। दूसरा सिख जो उसके द्वारा पकड़ा गया था, भिडंत में बाहर आया और उसकी पिस्तौल उस प्रक्रिया में नीचे गिर गईः एक कंबल, एक पगड़ी और उस सिख

सज्जन के जूते भी उसके घर के आंगन में गिर गये। उसने यह भी कथन किया कि जब वे बाहर आए तो उन्होंने दूसरे सिख सज्जन को देखा जो हष्ट पुष्ट लंबा- गौरवर्ण और उसकी काली और गोल आंखे थी। उक्त सिख ने अपने आग्नेयास्त्र से खुशदेव सिंह, गुरप्रीत कौर और इस पर भी गोलियां चलाईं। खुशदेव सिंह और गुरप्रीत कौर के शरीर के विभिन्न हिस्सों पर चोटें आई। उक्त गोलीबारी के दौरान, सिख जिसे उसने पकड रखा था उसको भी चोटें आईं और वह नीचे गिर गया। खुशदेव सिंह, गुरप्रीत कौर और वह सिख जिसके गोली लगी वह सड़क पर ही गिरकर मर गये। उसका यह भी कथन है कि उसका भाई हीरा सिंह (पी.डब्ल्यू. 40) भी शोर सुनकर घटनास्थल पर पहुंचा। उसके भी आग्नेयास्त्र से चोटें आईं। एक सोमनाथ गवाह पी.डब्ल्यू. 47 भी वहाँ आया और उसे भी चोटें आईं। उ सने यह भी कथन किया कि वह उस सिख की पहचान कर सकती थी जो उनके घर के आंगन में घुसा था और उसने अपने आग्नेयास्त्र से उस पर और उनके पति पर गोलियां चलाई थीं। उसने यह भी स्वीकार किया है कि उनकी दृष्टि कमजोर है व अभियुक्त को देखने के पश्चात, उसने एक अभियुक्त पर संदेह जताया, जिसका नाम पूछताछ में दया सिंह (अपीलार्थी) के रूप में सामने आया था। उसने कहा कि यह अभियुक्त वही व्यक्ति है जिसने उस पर और उसके पति पर गोलियां चलाई थीं। उसने फिर यह कहा कि वह इस अभियुक्त को जानती है परन्तु वह अपनी आँखें नहीं खोल रहा था, इसलिए उसने उस समय इन शब्दों का प्रयोग किया कि उसने संदेह के आधार पर

पहचान की थी। विद्वान न्यायाधीश ने नोट किया है कि गवाह ने न्यायालय में मौजूद सभी अभियुक्तगण में से उक्त अभियुक्त को पहचाननें में लगभग पाँच मिनट का समय लिया था। जिरह में, उसे यह बताया गया कि घटना के समय उसने एक व्यक्ति के शव की पहचान की थी जिसे घटना के दौरान गोली मार दी गई थी और वह शव बदमाश का था जिसकी काली और गोल आकार की आंखें थीं और जिसकी ऊंचाई 5.5 से 6 फीट थी। उसने आगे यह कथन किया कि घटना के समय उसकी दृष्टि सामान्य थी, लेकिन तत्पश्चात उसकी आंखों का ऑपरेशन हुआ है तथा एक आंख से उसे कुछ भी दिखाई नहीं देता और वर्तमान में वह चश्मे की मदद से लगभग एक फीट की दूरी से किसी वस्तु को देख सकती थी। उसने यह भी कहा है कि आरोपी दया सिंह की समान विशेषताएं थी जो उसे घटना के समय से ही याद हैं और इसलिए उसकी आंखे बन्द होने के बावजूद भी वह उसको पहचानने की स्थिति में है। उसने इस बात से इन्कार किया है कि उसने पुलिस के कहने पर दया सिंह की गलत पहचान की हो। उसने यह भी इंगित किया कि घटना के समय, आंगन में बिजली के बल्ब लगे हुये थे तथा उससे मुल्जिमान के रंग के बारे में पूछा गया तो उसने जवाब दिया कि दया सिंह का रंग सफेद था और यह सुझाव गलत बताया कि दया सिंह का रंग गोरा था। उसके अनुसार अन्य अभियुक्तगण जिसके नाम पुरषोत्तम सिंह और जसपाल सिंह थे तब उसे आरोपी दया सिंह और उन दो

व्यक्तियों के रंग के बीच अंतर करने के लिए कहा गया था, इस पर उन्होंने जवाब दिया कि वह अंतर नहीं कर सकती हैं।

इसके अलावा, पी.डब्ल्यू. 39 राम सिंह जो डॉ. हरनाम सिंह के घर के पास लगे बिजली के पोल के पास से गुजर रहा था वह भी एक गोली से घायल हो गए थे, लेकिन उसने यह नहीं देखा था कि गोली किसने चलाई। इस गवाह ने यह कथन किया है कि घटना स्थल पर अंधेरा था। इसी प्रकार डॉ. हरनाम सिंह के साला और पड़ोसी हीरा सिंह पी.डब्ल्यू. 40 को भी घटना के समय चोट औई थी तथा वह घटना के समय बाहर आया और ललकारा दिया। उसे भी अस्पताल ले जाया गया। वह आरोपी की पहचान करने में विफल रहा। इसी तरह सोमनाथ (पी.डब्ल्यू. 47) नामक व्यक्ति, गोलियों की आवाज सुनकर उसे पता चला कि आतंकवादी आ गए हैं। तब वह अपने चाचा के घर से अपने घर की ओर जा रहा था। रास्ते में दो लोग भागते हुये आए और उनके खिलाफ प्रहार किया। एक के हाथ में एक छोटी सी बन्दूक थी जो शायद एक रिवॉल्वर थी और दूसरे के हाथ में स्टेनगन जैसी बन्दूक थी। उसने उनमें से एक व्यक्ति को पकड़ने की कोशिश की और उससे टकरा गया। उस समय दूसरी दिशा से गोलीबारी हो रही थी और एक गोली उसके दाहिनी भुजा में लगी थी। उनका कहना है कि जो व्यक्ति उससे टकराया था, वह न्यायालय कक्ष में मौजूद नहीं है। अभियोजन पक्ष का तर्क रहा कि प्रथम सूचना रिपोर्ट गगनदीप सिंह (पी.

डब्ल्यू. 29) द्वारा दर्ज करवाई गई थी जो शाम को अपने घर वापस आ रहा था और गोलियां चलने की आवाज़ सुनकर वह भागकर मौके पर पहुंचा और पाया कि खुशदेव सिंह और गुरप्रीत कौर 3 से 4 सिखों के साथ भिड रहे थे। उसने उन लोगों को देखकर आवाज लगाई जिस पर एक व्यक्ति उसके पास स्टेनगन लेकर दौडा जिस पर वह डरकर वह वापस आया और उसने खुद को छिपा लिया। करीब 4 से 5 मिनट के बाद फिर से हरनाम सिंह के घर गया और यह पाया कि आतंकवादी जा चुके थे। उन्होंने पाया कि गुरप्रीत कौर और खुशदेव सिंह अत्यधिक गंभीर रूप से घायल थे और उनका बड़ा भाई गुरदीप सिंह मौके पर मृत पड़ा था। वह भागकर पुलिस स्टेशन पर गया लेकिन रास्ते में पुलिस उससे मिली और उसका बयान दर्ज कर लिया।

अभियोजन पक्ष ने भूमि अधिग्रहण अधिकारी हरबंस सिंह गवाह पी.डब्ल्यू. 43 जो कि 2 जून 1988 से कुरुक्षेत्र में तहसीलदार के रूप में पदस्थापित था के बयानों पर भी अवलम्ब लिया है जो कि पुलिस अधीक्षक कुरुक्षेत्र के कहने पर केंद्रीय कारागृह, अंबाला में पहचान परेड आयोजित कराने हेतु गया था। उसका यह कहना है कि वह शाम 5 बजे केंद्रीय कारागृह पहुंचा और कारागृह अधिकारियों ने दया सिंह को उसे सामने पेश किया। उन्होंने दया सिंह को सूचित किया कि वह पहचान परेड आयोजित करने के लिए आया है, लेकिन दया सिंह ने इस आधार पर भाग लेने से

मना कर दिया कि पुलिस के द्वारा उन्हें पहले ही अपेक्षित गवाहों को दिखा दिया गया है। उसके बयानों को उसके द्वारा रिकार्ड किया गया और उनकी रिपोर्ट के साथ उक्त बयान पुलिस अधीक्षक कुरुक्षेत्र को भेजा गया। जिरह में उसने यह कथन किया कि वह आरोपी दया सिंह को व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता था लेकिन कारागृह अधिकारियों द्वारा उसकी पहचान की गई थी। उन्होंने आगे यह भी कथन किया कि न्यायालय में मौजूद अभियुक्त व्यक्तियों में से आरोपी दया सिंह की पहचान वह नहीं कर सकता। उसने यह भी कथन किया है कि वह जसवंत कौर पी.डब्ल्यू. 37 को व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता था और यह नहीं बता सकता था कि उस दिन वह कारागृह परिसर के बाहर मौजूद थी या नहीं। उन्होंने इस सुझाव का खंडन किया कि आरोपी दया सिंह ने इस तरह की पहचान परेड के लिए कभी इन्कार नहीं किया हो और उसने झूठे बयान दिये हो।

पी.डब्ल्यू. 45 रोशन सिंह, डी.आई.जी., सी.आई.ऐसे.एफ., नई दिल्ली ने सशपथ बयान दिया है कि 5.5.1988, 22.5.1998, 2.6.1998 और 14.6.1998 पर उन्होंने कई अभियुक्तों के इकबालिया बयान दर्ज किए थे। उनका यह कहना है कि 29.6.1998 पर उन्होंने सी.आई.ए., कुरुक्षेत्र का दौरा किया और दया सिंह का इकबालिया बयान दर्ज किये थे, जिसे कि पूर्व पी. डब्ल्यू. 45/डब्ल्यू. के रूप में पेश किया गया है। उनके द्वारा यह भी कथन किया गया है कि आरोपी ने स्वेच्छा से बयान दिया था जिसे

उसे पढ़कर सुनाया गया और उसके हस्ताक्षर लिए गए। इकबालिया बयान के नीचे उसने उसके साथ पी. डब्ल्यू. 45/डब्ल्यू.-1. प्रमाण पत्र भी संलग्न किया। और उक्त इकबालिया बयान को उसी दिन मुख्य न्यायिक मजिरूस्ट्रेट., कुरुक्षेत्र को एक सीलबंद लिफाफे में भेजा था। उसने यह भी कथन किया कि दया सिंह सहित उन व्यक्तियों की पहचान नहीं सकता जिनके इकबालिया बयान उसके द्वारा विभिन्न तिथियों पर दर्ज किए गए थे। जिरह में, उसने यह भी स्वीकार किया है कि जब इकबालिया बयान दर्ज कर रहा था तो कई पुलिस अधिकारी, पुलिस स्टेशन में मौजूद थे। आगे जैसा कि विद्वान न्यायाधीश द्वारा विवेचन किया गया है कि उन्होंने इकबालिया बयान दर्ज करते सम की आवश्यक प्रक्रिया का पालन नहीं किया है और वह स्वैच्छिक नहीं है। इसीलिये उक्त इकबालिया बयान पर विचारण न्यायालय द्वारा उचित रूप से अवलम्ब नहीं लिया गया है। इसके अलावा पुरूषोत्तम सिंह को छोड़कर अन्य अभियुक्तगण के लगभग सभी इकबालिया बयान पुलिस अधीक्षक के रीडर द्वारा लिये गए थे, जिसको परीक्षित नही करवाया। अभियोजन पक्ष के साक्ष्य के अन्य भाग को दोहराने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि अपील में विवाद संकीर्ण है।

विद्वान वकील श्री ललित ने यह भी निवेदन किया कि अपीलार्थी की दोषसिद्धि पूरी तरह से पी. डब्ल्यू. 37 और पी. डब्ल्यू. 38 द्वारा न्यायालय में अभियुक्त की पहचान पर आधारित है। उन्होंने तर्क दिया कि यह घटना

अप्रैल, 1988 में हुई थी और न्यायालय में श्रीमती जसवंत कौर (पी.डब्ल्यू. 37) द्वारा इसकी पहचान की गई थी जो साढ़े सात साल के अंतराल के बाद नवंबर, 1996 में हैं। इसी प्रकार, डॉ. हरनाम सिंह (पी.डब्ल्यू. 38) द्वारा पहचान आठ साल बाद की है इसलिए, पहचान में देरी करने के एकमात्र आधार पर, अभियुक्त को दोषी ठहराने के लिए उनके साक्ष्य पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि इतनी लम्बी अवधि बाद गवाहों द्वारा आरोपी की पहचान करना मुश्किल है, जब तक कि उन्हें बार-बार नहीं देखा जाता है। उन्होंने इस प्रकरण में यह भी इंगित किया कि इस मामले में इस बात की संभावना है कि आरोपी को पहचान से पहले न्यायालय में दिखा दिया गया था। उसने यह भी तर्क दिया कि अन्य घायल गवाहों पी. डब्ल्यू. 29 गगनदीप सिंह, जिन्होंने प्राथमिकी दर्ज कराई, पी. डब्ल्यू. 40 हीरा सिंह और पी. डब्ल्यू. 47 सोमनाथ ने अभियुक्तों की नहीं पहचाना। उसने यह भी बताया कि पी.डब्ल्यू. 29 ने विशेष रूप से आंगन में रोशनी के बारे में नहीं बताया, लेकिन केवल यह कथन किया है कि स्ट्रीट लाइट के कारण वह आरोपी को देख सकता था और राम सिंह ने यह स्वीकार किया है कि घटना स्थल पर रात का समय था और अंधेरा था। यहां तक कि हीरा सिंह ने भी स्वीकार किया है कि लंबे समय के अंतराल के कारण वह हमलावरों की पहचान नहीं कर सके। स्वतंत्र गवाह तहसीलदार (पी.डब्ल्यू. 43) जो परीक्षण पहचान परेड के लिए गए साथ गया था, ने भी आरोपी की पहचान करने

में इंकार किया है। इसी तरह, कथित रूप से इकबालिया बयान दर्ज करने वाले ऐसेपी (पी.डब्ल्यू. 45) भी आरोपी की पहचान करने में विफल रहा हैं। ऐसी परिस्थितियों में अभियुक्त को दोषी ठहराने के लिए उपरोक्त दो गवाहों के साक्ष्य पर भरोसा करना सुरक्षित नहीं होगा। अंत में, उन्होंने तर्क दिया कि गवाह पी.डब्ल्यू. 37 और पी.डब्ल्यू. 38 के पहचान का बयान भी एक को रोक रहा है और इसलिए, आरोपी को संदेह का लाभ देने की भी आवश्यकता है। अपने तर्क के समर्थन में उन्होंने हरि नाथ और एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए. आई. और. (1988) ऐसे. सी. 345 में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा रखा। अपीलार्थी के विद्वान वकील ने मोहम्मद अब्दुल हफीज बनाम आंध्र प्रदेश राज्य मामले में इस न्यायालय के फैसलों पर भी भरोसा किया है। ए. आई. और. (1983) ऐसे. सी. 367, वकील सिंह और अन्य बनाम बिहार राज्य, ए. आई. और. (1981) ऐसे. सी. 1392 और सोनी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1982] 3 ऐसे. सी. सी. 368 जिसमें न्यायालय ने प्रेक्षण किया है कि काफी समय बीतने के बाद पहचान परेड का कोई परिणाम नहीं होगा और इसलिए, ऐसी पहचान के आधार पर, आरोपी को दोषी नहीं ठहराया जा सकता है।

इसके विपरीत, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि नामित न्यायालय ने पी.डब्ल्यू. 37 और पी.डब्ल्यू. 38 के साक्ष्य प्राप्त करने के आधार पर अभियुक्तों को सही रूप से दोषी ठहराया है, जाे कि

घायल गवाह होने के अलावा उन्होने अपने घर में हुई घटना के दौरान अपने बेटे और बहू को इस घटना में खो दिया था। यह भी तथ्य प्रस्तुत किये कि आरोपीगण आतंकवादी थे और ऐसी स्थिति में अन्य स्वतंत्र गवाह होने का कोई प्रश्न उत्पन्न नही होता है चाहे स्वतंत्र गवाह उपलब्ध ही हों, वे ऐसे अभियुक्त के खिलाफ कोई बयान देने की हिम्मत नहीं करेंगे। उन्होंने यह भी इंगित किया कि जैसा कि विद्वान न्यायाधीश द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था, जांच सुस्त थी लेकिन यह पी.डब्ल्यू. 37 और पी.डब्ल्यू. 38 के साक्ष्य पर भरोसा नहीं करने का कोई आधार नहीं है। यह भी युक्तियुक्त नही है कि पुलिस अधीक्षक द्वारा वर्ष 1988 में मामले में अभियुक्तों की इकबालिया बयान दर्ज किया था, सात से आठ साल के अंतराल के बाद वह अभियुक्त को पहचान करेगा। इसी तरह, पहचान परेड करने गए तहसीलदार से भी आरोपी की पहचान करने की उम्मीद नहीं की जाती है। उनका यह तर्क रहा कि न्यायालय ने घायल प्रभावित गवाहों के साक्ष्य पर सही रूप से भरोसा किया है और इस संबंध में उसने उद्देश्य के लिए उन्होंने नामित न्यायालय द्वारा की गई प्रेक्षण को इस प्रभाव के लिए संदर्भित किया कि आरोपी दया सिंह के बाहरी रंग रूप को जसवंत कौर की स्मृति में एक गली के पत्थर की तरह अंतर्निहित किया गया होगा क्योंकि यह वही था जिसने अपने सह-हमलावरों के साथ मिलकर यह वीभत्स अपराध किया था।

इस स्तर पर हम सबसे पहले उन निर्णयों का उल्लेख करेंगे जिन पर निर्भरता रखी गई है। सोनी (सुप्रा) के मामले में, इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि पहचान परेड कराने में 42 दिन की देरी से इसकी वास्तविकता पर संदेह पैदा होता है, इस तथ्य के अलावा कि यह मुश्किल है कि इतने लंबे समय के बाद गवाह अपीलार्थी के चेहरे के भाव याद रखेंगे। मोहम्मद अब्दुल हफीज (सुप्रा), के प्रकरण में न्यायालय ने एक डकैती के मामले पर सुनवाई करते हुए यह मत व्यक्त किया है कि चूंकि कोई पहचान परेड आयोजित नहीं की गई थी, इसलिए न्यायालय में चार महीने के अंतराल के बाद आरोपी की पहचान की विश्वसनीयता को स्थान नही दिया जा सकता। हरिनाथ (सुप्रा) के प्रकरण में, भी न्यायालय ने कहा कि परीक्षण पहचान परेड की साक्ष्य, साक्ष्य अधिनियम की धारा 9 के तहत स्वीकार्य है लेकिन पहचान परेड के मूल्यांकन हेतु अन्य सुरक्षा उपायों के अलावा परीक्षण पहचान का मूल्य उस समय पर निर्भर करता है जब संदिग्ध व्यक्तियों को परीक्षण पहचान के लिए रखा जाता है। यदि अभियुक्त व्यक्तियों को पहचान परेड के लिए प्रस्तुत करने में अस्पष्ट और अयुक्तियुक्त देरी होती है, तो उक्त देरी ही अपने आप में परीक्षण की विश्वसनीयता को कम करती है। न्यायालय ने आगे अभियुक्त की पहचान में हुई त्रुटि के आधार पर (पैरा 9) प्रो. बोर्चर्ड के "निर्दोष को दोषी ठहराने" का उल्लेख किया। विद्वान लेखक ने यह प्रेक्षण किया किः-

"पीड़ित या चश्मदीद गवाह का भावनात्मक संतुलन उसके असाधारण अनुभव से इतना व्यथित होता है कि उसकी धारणा की शक्तियां विकृत हो जाती हैं और उसकी पहचान अक्सर सबसे अधिक अविश्वसनीय होती है। पहचान में अन्य उद्देश्यों को दर्ज करें जो अनिवार्य रूप से मूल रूप से अभियुक्त द्वारा व्यक्तिगत रूप से एक अपराध का बदला लेने की इच्छा, या दोषी माने जाने वाले व्यक्ति से सटीक बदला लेने, बलि का बकरा खोजने, सचेत रूप से या अनजाने में समर्थन करने की इच्छा को प्रेरित करते हैं। एक पहचान जो पहले से ही दूसरे द्वारा बनाई गई हो। इस प्रकार, अभियुक्तों के खिलाफ संदेह का समाधान किया जाता है।

पैराग्राफ 10 और 11 में, न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की हैः-

"10" शिनाख्त करने की साक्ष्य केवल न्यायालय में मौखिक गवाहो की पुष्टि और मजबूती देता है जो केवल पहचान के रूप में प्राथमिक और ठोस सबूत है। हसीब बनाम बिहार राज्य, ए. आई. और. (1972) ऐसे. सी. 283 में इस न्यायालय ने

"11" परीक्षण पहचान का उद्देश्य उस साक्ष्य का परीक्षण करना है, सुरक्षित नियम यह है कि न्यायालय में गवाह की सशपथ साक्ष्य में

अभियुक्त की पहचान के रूप में, जाे कि उसके लिये एक अजनबी व्यक्ति सामान्य निमयों के रूप में है, के द्वारा पूर्व में की गई शिनाख्त कार्यवाही की पुष्टि के लिये आवश्यकता होती है।

रामेश्वर सिंह बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य, ए.आई.और. (1972) ऐसे. सी. 102 में, इस न्यायालय ने कहा (p.104 पर):

यह याद रखा जा सकता है कि गवाह का सारभूत साक्ष्य न्यायालय के समक्ष उसकी साक्ष्य है, लेकिन जब आरोपी व्यक्ति पहले से संबंधित गवाह को नही जानता है तो अभियुक्त की गिरफ्तारी के तुरन्त पश्चात गवाह से आरोपी की पहचान कराना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि यह अन्वेषण जांच एजेंसी को यह आश्वासन देता है कि अन्वेषण जांच सही दिशा में आगे बढ़ रही है, साथ ही गवाह द्वारा न्यायालय के समक्ष विचारण के दौरान दिए जाने वाले साक्ष्य की पुष्टि भी करता है।...."

11. इसमें कोई संदेह नहीं है कि पहचान परेड की पुष्टि के अभाव में कोई विशेष फर्क नही पडता है यदि गवाह आरोपी को पहले से जानता था या जहां गवाह के मन और स्मृति पर पहचान का स्थायी प्रभाव पडने के कारण, अन्यथा, कारण सामने लाए जाते हैं। यह भी सही कहा गया है कि

अदालतों को सैद्धांतिक संभावनाओं को बढ़ा कर मुश्किलों को नहीं बढ़ाना चाहिए। यह उनका अधिकार क्षेत्र है कि वास्तविक और भौतिक रूप

से मामलों को निपटाये और अत्यधिक सिद्धांत या जो वास्तव में महत्वहीन है उसे बड़ा करके आत्मसमर्पण न करें।

इसलिए प्रश्न यह है कि जहां घायल चश्मदीद गवाहों पी.डब्ल्यू. 37 और पी.डब्ल्यू. 38 की साक्ष्य अपीलार्थी को अपराध से युक्तियुकत संदेह से जोडने हेतु पर्याप्त है। इस उद्देश्य के लिए, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि परीक्षण पहचान का उद्देश्य पूर्व पहचान के रूप में चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य की पुष्टि करना है और गवाह का ठोस साक्ष्य न्यायालय में साक्ष्य है। यदि वह साक्ष्य विश्वसनीय पाया जाता है तो परीक्षण पहचान द्वारा पुष्टि का अभाव किसी भी तरह से विपरीत प्रभाव नहीं होगा। इसके अलावा, जहां गवाहों के दिमाग और स्मृति पर पहचान का स्थायी प्रभाव प्राप्त करने के कारणों को रिकॉर्ड पर लाया जाता है, वहां सैद्धांतिक संभावनाओं को विस्तृत करने और निष्कर्ष पर पहुंचना उपयुक्त नहीं है-वर्तमान सामाजिक वातावरण जो आतंकवाद से प्रभावित है, में उक्त तथ्य वास्तविक रूप से महत्वहीन है। ऐसे मामलों में, पहचान परेड का आयोजन न करना अभियोजन पक्ष के लिए घातक नहीं है। इस न्यायालय द्वारा महाराष्ट्र राज्य बनाम सुरेश, [2000) धारा 471 में पहचान परेड का उद्देश्य संक्षेप में इस प्रकार कहा गया हैः

पीठ ने कहा, "हम यह ध्यान रखना चाहिये कि पहचान परेड मुख्य रूप से न्यायालय के लिए नहीं है। वे अन्वेषण के उद्देश्यों के लिए हैं।

परीक्षण पहचान परेड आयोजित करने का उद्देश्य दो तरह है। पहला यह है कि गवाहों को खुद को संतुष्ट करने में सक्षम बनाना है कि जिस कैदी पर उन्हें संदेह है वह वास्तव में वही है जिसे अपराध कारित करते समय देखा गया था। दूसरा अन्वेषण अधिकारियों को संतुष्ट करना है कि संदिग्ध ही वास्तविक रूप से वह व्यक्ति है जिसे गवाहों ने उक्त घटना के संबंध में देखा था।"

वर्तमान मामले में, परीक्षण पहचान परेड आयोजित करने में अनुसंधान अधिकारीकी ओर से कोई चूक नहीं है। अपीलार्थी को 28 मई, 1988 को गिरफ्तार किया गया था और पहचान परेड 2 जून को आयोजित की जानी थी, लेकिन उस दिन आरोपी ने परेड में भाग लेने से इन्कार कर दिया। उसकी गिरफ्तारी के लिए, पी. डब्ल्यू. 45. रेशम सिंह, डी. आई. जी. और पी. डब्ल्यू. 46. बिशन सिंह, सी. आई. ए. इंस्पेक्टर ने विशेष रूप से कहा है कि अपीलार्थी को पंजाब पुलिस द्वारा 27 मई, 1988 को गिरफ्तार किया गया था और 28 मई, 1988 को कुरुक्षेत्र लाया गया था और उसे न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया था क्योंकि उसकी पहचान की जानी थी। इसके अलावा, तहसीलदार के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है जो अभियुक्तों की परीक्षण पहचान परेड आयोजित करने के लिए वहां गए थे। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ललित जी ने बार-बार यह दोहराया कि अनुसंधान अधिकारी ने तहसीलदार के द्वारा दर्ज किए गए

आरोपी के बयान और उसके द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट को रिकॉर्ड में पेश नहीं किया है और इसलिए, तहसीलदार के साक्ष्य को कोई विश्वसनीयता नहीं दी जानी चाहिए। हमारे विचार में, यह निवेदन पूरी तरह से भ्रामक है। यह सत्य है कि यदि अनुसंधान अधिकारी ने आरोपी का बयान और तहसीलदार द्वारा लिये गये बयान व रिपोर्ट को रिकॉर्ड में प्रस्तुत किया होता, तो ही उनके कथन की पुष्टि करता। लेकिन हमारे विचार में इस तरह के उदासीन, स्वतंत्र, आधिकारिक गवाह के साक्ष्य के लिए किसी पुष्टि की आवश्यकता नहीं है। जिरह में, तहसीलदार ने विशेष रूप से कहा है कि वह आरोपी दया सिंह को व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता था, लेकिन कारागृह अधिकारियों द्वारा आरोपी की पहचान की गई थी। उन्होंने इस सुझाव का भी खंडन किया है कि दया सिंह ने इस तरह की पहचान परेड के लिए कभी इन्कार नहीं किया और वह झूठ बोल रहा हो। तहसीलदार को अभियोजन में या आरोपी को गलत तरीके से शामिल करने में कोई दिलचस्पी नहीं थी। इसके अलावा, उससे यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वह आरोपी को व्यक्तिगत रूप से जाने और न ही वर्षों तक उसका चेहरा याद रखे। वह अपने आधिकारिक कार्यों का निर्वहन कर रहा था तथा उस इस बात की अपेक्षा नही की जा सकती कि वह उन व्यक्तियों की पहचान करे जिनके बयान उन्होंने दर्ज किए थे। यह मानने का भी कोई आधार नहीं है कि कारागृह अधिकारियों ने दया सिंह को परेड के लिए सी तहसीलदार के सामने पेश करने में कोई गलती कारित की है। आगे, तहसीलदार की

साक्ष्य कि वह पहचान परेड के लिए केंद्रीय कारागृह गया था, पी. डब्ल्यू. 38 की साक्ष्य से भी होती है जो आरोपी की पहचान करने के लिए केंद्रीय कारागृह, अंबाला भी गया था, लेकिन उन्हें सूचित किया गया था कि आरोपी ने परीक्षण परेड में भाग लेने से इन्कार कर दिया था। यह कहा जाना चाहिए कि ऐसी स्थिति में, सूरज पाल बनाम हरियाणा राज्य, [1995) 2 ऐसे. सी. सी. 64 मामले में इस न्यायालय ने यह अवधारित किया कि गवाह की पहचान करने का न्यायालय में दिया गया साक्ष्य सारवान साक्ष्य है और यदि अभियुक्त ने स्वयं की इच्छा का प्रयोग करते हुए बिना किसी युक्तियुक्त कारण के परीक्षण परेड के लिए प्रस्तुत होने से इन्कार कर दिया, तो उसने अपने जोखिम पर ऐसा किया और उसके लिए उसका यह कथन नहीं सुना जा सकता है कि परीक्षण परेड के अभाव में, डॉक पहचान उचित नहीं है और इसे स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। यदि यह अन्यथा विश्वसनीय पाया गया था। न्यायालय ने यह प्रेक्षण किया कि "यह सच है कि उन्हें परीक्षण परेड के लिए कतार में खड़े होने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता था, लेकिन उन्होंने अपने जोखिम पर ऐसा किया, जिसके लिए अभियोजन पक्ष को परीक्षण परेड आयोजित नहीं करने के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता था।" उस मामले में भी, न्यायालय ने आरोपी द्वारा पहचान में भाग नहीं लेने के लिए दिए गए औचित्य को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि आरोपी को पुलिस द्वारा गवाहों को दिखाया गया था। वर्तमान मामले में भी यही स्थिति है।

इसके अलावा, डॉ. हरनाम सिंह और उनकी पत्नी जसवंत कौर के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है जब उन्होंने विचारण का सामना कर रहे 14 व्यक्तियों में से अभियुक्तों की पहचान की। अपीलार्थी की पहचान के संबंध में उनका साक्ष्य ठोस और स्थिर है। न्यायालय परिसर में डॉ. हरनाम जी सिंह का आचरण स्वाभाविक था। चूंकि न्यायालय कक्ष में बिजली नहीं थी, इसलिए वह दूसरे दौर में न्यायालय कक्ष के बाहर जाने के बाद आरोपी की पहचान की, जिसमें 3 से 4 मिनट लगे। उसने आरोपी दया सिंह को स्वयं के बेटे और बहू के साथ उलझते देखा था। इस गवाह द्वारा पहचान का परीक्षण प्रतिपरीक्षा में किया गया था और हमारे विचार में, वह प्रतिपरीक्षा की कसौटी पर खरा उतरा। उन्होंने यह कहकर आरोपी की विशिष्ट शारीरिक पहचान बताई कि उसकी 'बिल्ली जैसी आंखें' हैं जिसका अर्थ है 'बिल्ली जैसी आंखें'। उन्होंने यह भी कहा है कि उन्होंने आरोपी को 1 गज से 3 से 4 गज की दूरी तक देखा था और अपीलार्थी-आरोपी ने आंगन में 3 से 4 गज की दूरी से गोलीबारी की थी। इस गवाह ने अपनी पत्नी के साथ दिनांक 07.05.1988 को एक अन्य सहायक दलजिंदर सिंह उर्फ चंदीबाबा के शव की भी पहचान की है। जिरह में, उन्होंने आगे कहा कि वह चश्मा पहनने और हटाने के बाद अपीलार्थी की पहचान कर सकते हैं और उसने न्यायालय कक्ष में ऐसा करके दिखाय। इसी तरह, जसवंत कौर ने भी अपीलार्थी की पहचान हमलावर के रूप में की। उसका साक्ष्य इतनी वास्तविक है कि यह विश्वास करना असंभव है कि

वह आरोपी-अपीलार्थी को झठे तरीक से लिप्त कर रही हो। शुरुआत में, उसने यह उनका तर्क है कि न्यायालय ने घायल प्रभावित गवाहों के साक्ष्य पर सही रूप से भरोसा किया और इस संबंध में उसने उद्देश्य के लिए उन्होंने नामित न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों कोन अभियुक्तों में से एक पर संदेह जताया जो अपीलार्थी के रूप में अपनी आँखें नहीं खोल रहे थे और उक्त व्यक्ति की पहचान उस व्यक्ति के रूप में की जिसने उस पर और उसके पति पर गोलियां चलाई थीं। यह पहचान पाँच मिनट का समय लेकर की गई थी। उसने सशपथ यह कहा कि दया सिंह के पास ऐसी ही विशेषताएं थीं जो उसे घटना की तारीख से याद थी और उसने इस सुझाव को गलत बताया कि उसने पुलिस के कहने पर आरोपी की गलत पहचान की हो। पी.डब्ल्यू. 38 डॉ. हरनाम सिंह, जो एक डॉक्टर और एक विधायक भी थे, अपीलार्थी को इस तरह के जघन्य अपराध में गलत रूप से लिप्त नहीं करेंगे। अपराध में अपीलार्थी को लिप्तता के संबंध में गवाह को कोई कारण सुझाव में नहीं दिया गया। इसी तरह, जसवंत कौर का भी आरोपी में कोई हित नही था। हालाँकि, अपीलार्थी के विद्वान वकील, श्री ललित ने प्रोफेसर बोर्चर्ड के कथन का उल्लेख किया, "पीड़ित या चश्मदीद गवाह का भावनात्मक संतुलन उसके असाधारण अनुभव से इतना व्यथित होता है कि उसकी धारणा की शक्तियाँ विकृत हो जाती हैं और उसकी पहचान अविश्वसनीय होती है।" यह सत्य है कि पी.डब्ल्यू. 37 और 38 ने अपने बेटे, बहू और साले के बेटे को खो दिया है और आतंकवादियों द्वारा हमला

किया जाना उनके लिए असाधारण अनुभव था। लेकिन, यह अवधारित करना मुश्किल होगा कि उस समय, उन्होंने अपनी धारणा की शक्ति खो दी हो। सैद्धांतिक रूप से कुछ मामलों में विद्वान लेखक द्वारा जो उल्लेख किया गया है वह सच हो सकता है। उस उद्देश्य के लिए, गवाह के साक्ष्य की अतिरिक्त सावधानी और आवश्यक ध्यान के साथ मूल्यांकन की जानी चाहिए। लेकिन, जहां साक्ष्य ठोस, स्थिर सुसंगत और बिना कोई उद्देश्य के है, तो गवाहों की मानसिक स्थिति और हमलावरों की पहचान याद रखने की उनकी शक्ति के संबंध में सैद्धांतिक संभावनाओं की कल्पना करने और उन्हें बढाना उपयुक्त नहीं है। धारणा और याद रखने की शक्ति मनुष्य से मनुष्य में भिन्न होती है और यह स्थिति पर भी निर्भर करती है तथा यह पूर्व में जो देखा गया है उसको पुनरावृत्ति करने की क्षमता पर भी निर्भर करती है। लेकिन यह उन गवाहों की शक्ति व विश्वसनीयता पर निर्भर करेगा जिन्होंने पहले न्यायालय में आरोपी की पहचान की है। इसके अलावा वर्तमान मामले में, न्यायालय में 14 व्यक्तियों में से पहचान की थी। यह तथ्य स्वयं गवाहों द्वारा पहचानने को विश्वसनीयता प्रदान करता है। इस उद्देश्य के लिए, विद्वान न्यायाधीश ने सही रूप से प्रेक्षण किया है कि अभियुक्त की शारीरिक विशेषताओं को जसवंत कौर की स्मृति में अंतर्निहित किया गया होगा। इन दोनों गवाहों के साक्ष्य और जिरह से यह स्पष्ट है कि उन्होंने घटना के दौरान अभियुक्त की पहचान का स्थायी प्रभाव प्राप्त किया। इसलिए, किसी न किसी कारण से नामित न्यायाधीश द्वारा

मुकदमे में देरी होना और उसके बाद सात या आठ साल के बाद में न्यायालय में अभियुक्त की पहचान इन दो गवाहों के साक्ष्य को प्रभावित नहीं करेगी। इसी प्रकार, यदि अभियोजन पक्ष अभियुक्त को मिथ्या रूप से शामिल करने में रुचि रखता था, तो पी. डब्ल्यू. 29 गगनदीप सिंह, पी. डब्ल्यू. 40 हीरा सिंह और पी. डब्ल्यू. 47 सोमनाथ को विचारण के समय अभियुक्त की पहचान करने का अवसर मिला था। हालाँकि, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि चूंकि इन्होने अभियुक्त की पहचान नहीं की है, इसलिए जसवंत कौर पी.डब्ल्यू. 37 और डॉ. हरनाम सिंह पी.डब्ल्यू. 38 की साक्ष्य संदिग्ध हो जाती हैं। हमारे मत में, यह तर्क सबसे पहले इस आधार पर गलत है कि सभी गवाहों से को अभियुक्त की पहचान करने की अपेक्षा नहीं की जाती है न ही उनके बयानों की तुलना विद्वान वकील द्वारा सुझाए गए तरीके से की जा सकती है। दूसरा, वर्तमान मामले में, उपरोक्त गवाहों को तब चोटें आईं जब वे डॉ. हरनाम सिंह के परिसर के बाहर थे। अपीलार्थी के विद्वान वकील ने आगे यह भी तथ्य प्रस्तुत किये कि तहसीलदार पी.डब्ल्यू. 43, जिनके पास अपीलार्थी का बयान दर्ज करने का अवसर था और रेशम सिंह, डी.आई.जी. पी.डब्ल्यू. 45, जिन्होंने स्वीकारोक्ति के रूप में बयान दर्ज किया था, जो 10 से अधिक पृष्ठों का है, ने न्यायालय में अभियुक्त की पहचान नहीं की है। हमारे मत में, तहसीलदार और डी. आई. जी. अपने आधिकारिक कार्यों का निर्वहन कर रहे थे और घटना से बिल्कुल भी प्रभावित नहीं थे जिससे कि वह अभियुक्तगण की पहचान को

याद रखते। इस स्तर पर, हम विद्वान वकील श्री यू. और. ललित द्वारा के साथ की गई एक अन्य प्रस्तुति पर ध्यान देंगे जो आंगन में दो बिजली के बल्बों के संबंध में थी। हमारे मत में, इस संबंध में प्रस्तुत कथन अधिक विचार के योग्य नहीं है। यह घटना शाम के समय (अप्रैल के महीने में) रात 8 बजे से 8:30 बजे के बीच हुई थी और घोर रात्रि नहीं थी, जहां कि अभियुक्तगण का चेहरा देखने में कठिनाई हो सकती हो। इसके अलावा, यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि आतंकवादी जो शहर में स्थित उस घर में घुस गए थे, जो कि एक विधायक का घर था अतः ऐसे में यह मानना मुश्किल होगा कि तत्समय आंगन में दो बिजली के बल्ब उस समय चालू नहीं हो। इसलिए, विद्वान न्यायाधीश ने अपने निर्णय में इस पहलू की उचित सराहना की है।

इसलिए, हम विद्वान न्यायाधीश द्वारा साक्ष्य के सराहनीय मूल्यांकन के आधार पर अभियुक्त दया सिंह को दोषी ठहराने और शेष अभियुक्तगण को बरी किये जाने से पूर्ण रूप से सहमत हैं।

नतीजे के रूप में, दोनों अपीलें खारिज की जाती हैं।

अपीले खारिज

यह अनुवाद और्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से व स्वयं अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्रीमती रेखा चौधरी (और.एच.जे.ऐसे.) द्वारा विवेक से व अन्य टूल की सहायता से भी किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।